गांधी चिंतन और कर्मण्यता (उदारवादी एवं उग्रवादी विचारों का समन्वय)

– डा. ओम प्रकाश मीणा,
व्याख्याता, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, टोंक
– सुरेन्द्र वर्मा,
शोध छात्र, एम.डी.एस. विश्वविद्यालय, अजमेर

विश्व प्रसिद्ध नोबल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक अल्बर्ट आइन्सटान ने 1944 में महात्मा गाँधी की प्रशस्ति में कहा था कि आगे आने वाली भावी पीढ़ियां शायद ही यह विश्वास कर पाएंगी कि गाँधी जैसा हाड़–मांस का व्यक्ति इस धरती पर कभी विचरण किया करता था। ज्ञात होता है कि आइन्सटाइन की वह 'आगे आने वाली पीढ़ियां' वर्तमान में उभर चुकी हैं। अतः आश्चर्य नहीं कि नैतिक पतन, अनास्था, असंतुलन, संकीर्णता एवं नासमझी के वातावरण में गाँधी का व्यक्तित्व पहले से भी अधिक विस्मयकारी एवं विराट प्रतीत होता है। मूल्यों की ऊहापोह एवं अनिश्चितता के इस माहौल में गाँधी की स्पष्ट आस्थाओं और मूल्यों की अभिव्यक्ति रहस्यमय सी लगती हैं।

गाँधी के लिए राष्ट्रवाद न केवल एक राजनीतिक कार्यक्रम था बल्कि सामाजिक, आर्थिक तथा इन सबसे ऊपर एक मनोवैज्ञानिक कार्यक्रम भी था, जिसमें सम्पूर्ण राष्ट्र के साथ पूर्ण तादात्म की भावना होना आवश्यक था। अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु उन्होंने जिस विधा का अवलम्बन किया उसमें किसी अस्त्र–शस्त्र की नहीं अपितु आभ्यंतरिक

नैतिक शक्ति की अपेक्षा थी। उनकी स्पष्ट मान्यता थी कि राष्ट्रीय आन्दोलन जन आन्दोलन के रूप में ही सफल हो सकता है और जन सामान्य को इसमें सहभागी बनाने के लिये उन्होंने मौलिक मनोवैज्ञानिक तरीके अपनाए। ये नैतिक साधन एवं तरीके जन सामान्य की समझ एवं भारतीय संस्कृति के मूल आधार हैं, जिसमें सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा, बहिष्कार, असहयोग आदि इन सभी को गाँधी ने सरकार के विरुद्ध चलाये गये संघर्ष के प्रतीकों के रूप में चुना जिनमें व्यापक जन–चेतना का प्रसार हुआ।

गाँधी चिंतन और कर्मण्यता

उदारवादी एवं उग्रवादी विचारों का समन्वय गाँधी चिंतन के उन पक्षों पर बल देता है जिनमें गाँधी की कर्मण्यता पर कहीं उदारवादी विचारों का भाव दृष्टिगोचर होता है। वस्तुतः गाँधी सम–सामयिक चिंतन धाराओं से विलग नहीं रह सकते थे। वे उनसे किस प्रकार प्रभावित हुये तथा किस प्रकार स्वयं को एक संकल्परत समन्वयवादी कर्मयोगी के रूप में प्रतिष्ठित किया तथा अपने विकल्पों के निर्धारण हेतु कौनसा विकल्प चुना?

गाँधी के चिंतन आदर्शों एवं विकल्पों को उदारवादी विचारों से प्रेरित माना गया तथा दूसरी तरफ उनके योगदान को उग्रवादी आधारों पर निर्मित नैतिक संरचना के समकक्ष रखा गया, जिसमें उग्रवादी दृष्टिकोण के परिलक्षण के बावजूद 'नैतिक परमवाद' की प्राथमिकता बनी रही है। यह तथ्य पहले भी स्पष्ट हो चुका है कि गाँधी ने उदारवादी अग्रज गोपाल कृष्ण गोखले को राजगुरू की संज्ञा दी। अतः राजनीतिक व्याख्याकारों द्वारा कहा गया है कि गाँधी गोखले का अनुसरण कर रहे हैं। उनके राजनीतिक विकल्पों में परस्पर समानता नजर आती है। लेकिन यह कहना इन दोनों कर्मण्यवादी विचारों के प्रति अन्याय होगा क्योंकि दोनों ही राष्ट्रवादियों का राजनीतिक अवतरण भिन्न परिस्थितियों में हुआ है। गोखले व गाँधी विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक प्राथमिकताओं से जुड़े रहे। जहां गोखले भारतीय राजनीति में एक उदारवादी नेता के रूप में उभर कर आए वहीं गाँधी उदारवादी विचारों से दूर, अपने विचारों का स्वरूपण दक्षिण अफ्रीका में विभिन्न चुनौतियों के माध्यम से कर रहे थे।

यद्यपि गोखले का सम्पर्क दक्षिण अफ्रीका में भारतीय प्रवासियों की समस्याओं के साथ जुड़ा रहा, लेकिन उन्होंने दक्षिण अफ्रीका को स्वयं नेतृत्व प्रदान नहीं किया, जबकि गांधी ने न केवल दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भारतीयों की समस्याओं को प्रत्यक्ष देखा, बल्कि स्वयं उन्हें दिशा निर्देश भी दिया। यही गाँधी के मूल विचारों के निर्माण का काल है, जहां उन्होंने सत्य का प्रथम बार प्रयोग करने का प्रयास किया। इसके बाद सन् 1915 से 1948 तक यानि मृत्यु पर्यन्त तक गांधी भारतीय चिन्तन और कर्मण्यता के क्षेत्र से जुड़े रहे। भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए किए गए अपने अथक प्रयासों से गाँधी मात्र एक कर्मण्यवादी के रूप में ही प्रतिष्ठित नहीं हुए, बल्कि एक बहुआयामी व्यक्तित्व एवं विचारों से सम्पन्न व्यक्ति के रूप में उभर कर सामने आए।

लेकिन इसका अर्थ नहीं है कि गोखले अपनी सीमा के अन्दर भारतीय राजनीति से ही जुड़े रहे, अपितु उन्होंने ब्रिटिश विशिष्टजनों से अर्थपूर्ण संबंध स्थापित कर लिए थे। साथ ही अफ्रीका से भी निरन्तर सम्पर्क बनाए रखा। अतः गोखले का मुख्य उद्देश्य भारत ही था और इस सम्बन्ध में कोई अवसर हाथ से नहीं खोना चाहते थे।

यद्यपि गाँधी भी भारत से सम्बन्धित रहे, फिर भी गोखले से विपरीत गाँधी ने कभी सक्रिय राजनीति में प्रवेश नहीं किया। इस प्रकार जब गाँधी प्रतीकात्मक रूप से सत्य के साथ प्रयोग की बात कर रहे थे, उनकी 'सत्य' की अवधारणा रूढ़िवादिता पर आधारित नहीं थी। उनका विश्वास था कि सम्पूर्ण सत्य तो एक मात्र सर्वत्र सर्वनियंता ही जानता है, तब वे वास्तव में विभिन्न सकारात्मक विचारों, प्रभावों, मूल्यों, धर्मों, प्रशासनिक सुधारों के विभिन्न क्षेत्रों में दिए गए विचारों का ही क्रियान्वयन कर रहे थे। इसी सन्दर्भ में गाँधी गोखले से भिन्न विचार प्रस्तुत कर रहे हैं। यह भी स्पष्ट है कि गोखले जब एक तरफ भारतीय घटनाक्रम में जन–जीवन एवं राजनीतिक मामलों का शिक्षण–प्रशिक्षण ले रहे थे, तब दूसरी ओर गाँधी एक प्रतिष्ठित वकील थे, जिन्हें समय और परिस्थितियों ने सम्पूर्ण जीवन तथा राजनीतिक कर्मण्यता में कुशल एवं दक्ष बना दिया था। एक प्रवक्ता की तरह गोखले का राजनीतिक मामलों पर अलग दृष्टिकोण था, जबकि गाँधी कानून के अनुसार भिन्न कार्य पद्धति अपनाते थे। इससे स्पष्ट होता है कि किस प्रकार दो राजनीतिक विचारक तथा कर्मण्यवादी अलग–अलग मुद्दों को स्वीकार कर रहे थे, जबकि गाँधी ने अपने गुरू गोखले के प्रति कभी भी वैयक्तिक सन्देह–आक्षेप व्यक्त नहीं किया।

गाँधी और गोखले दोनों ही के लिए मुख्य उद्देश्य राष्ट्रवाद था। हाँ, यह एक अलग तथ्य है कि उन्होंने विभिन्न विचारों की अभिव्यक्ति की और विभिन्न साधनों को अपनाकर विभिन्न प्रतीकों की स्थापना की, किन्तु सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि दोनों ही साधन एवं साध्यों की शुद्धि पर कोई समझौता करने को तैयार नहीं थे। इस प्रकार दोनों ही राजनीतिज्ञ कर्मण्यवादी इस मौलिक आधार पर सहमत थे। यह अलग तथ्य है कि उन्होंने अपने राजनीतिक साधनों को नाम अलग दे दिए।

यह स्पष्ट है कि गोखले की राजनीति पूर्णतः उदारवादी साधनों और उद्देश्यों के आधार से प्रभावित थी। वे भारत के स्वशासन के प्रति सचेत थे, जिसका अभिप्राय है कि भारतीयों को किसी भी स्वतंत्र देश की भांति अधिकार मिलने चाहिए। गोखले भारत–ब्रिटिश सम्पर्क के प्रति निष्ठावान थे तथा इसे इस विशेष उद्देश्य से प्रेरित समझते थे कि यह भारत के कल्याण और विकास के लिए है।

आरम्भ में गाँधी का भी यह विश्वास था लेकिन ब्रिटिश दमनकारी नीतियों के फलस्वरूप उनकी राजनीति कार्य पद्धति का प्रवाह सविनय–अवज्ञा, असहयोग, बहिष्कार, स्वदेशी जैसी विचारधाराओं की तरफ मुड़ गया। किन्तु यह गोखले की राजनीति नहीं थी। अपितु असहयोग, अवज्ञा तथा बहिष्कार का मार्ग अपनाते हुए भी गाँधी सत्य और अहिंसा जैसे आदर्शों के प्रति

विमुख नहीं हुए। वह सत्याग्रह के मर्यादित रूप में असहयोग की बात कर रहे थे। गाँधी के द्वारा संचालित एवं क्रियान्वित खेड़ा, चम्पारन तथा दांडी यात्रा, असहयोग आन्दोलन, भारत छोड़ो आन्दोलन और 'करो या मरो' के सशक्त नारे देकर न केवल भारतीयों को हिला दिया बल्कि एक ऐसा सशक्त प्रत्युत्तर उन्हें मिला, जिसकी उन्हें कभी कल्पना भी नहीं थी। इसका मुख्य उद्देश्य संभवतः यह भी था कि गोखले की उदारवादी अपील जहाँ बुद्धिजीवियों के विवेक को जागृत करती थी, वहीं गाँधी की अपील जनता के अन्तःस्थल को प्रभावित करती थी। जबकि गोखले आर्थिक राष्ट्रवाद के गंभीर विद्यार्थी थे। उनका विश्वास था कि भारत असहाय और गरीब स्थिति की ओर बढ़ने लगा था। गोखले पश्चिमी तकनीकी विज्ञान और औद्योगिक विकास से प्रभावित थे तथा भारत में भी इसी प्रकार के विकास की कामना करते थे।

गाँधी की प्राथमिकता में व्यक्ति की गरिमा सर्वोपरि थी। उनकी स्वयं का विश्वास था कि भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता ही व्यक्ति को अहिंसा, सत्य, मानवीय मूल्य तथा आत्म–नियंत्रण पर प्रतिबद्ध कर सकती है। गाँधी हमेशा इस तथ्य के प्रति सचेत रहे कि एक निश्चित, एकीकृत और संगठित जनसमूह ही स्व–शासन प्राप्ति में सफल हो सकता है। इसीलिए गाँधी ने राजनीति की अपेक्षा लोकनीति का नाम अधिक उचित समझा। आज की राज्य व्यवस्था की जगह उन्होंने सर्वोदय राज्य का नाम लिया। गाँधी सादा जीवन उच्च विचार के कथन से अनुप्राणित थे। अपने तरीकों, मूल्यों और कर्मण्यता से वे विश्व नेता बन गऐ थे। गोखले एवं गाँधी दोनों ही संवाद की राजनीति में विश्वास करते थे, किन्तु जहाँ गोखले की राजनीति है, वहां गाँधी की नैतिकता है, जिसे किसी परमवाद में बदला नहीं गया है।

अपितु गांधी का चिन्तन एक ऐसे कर्मण्यवादी की अभिव्यक्ति है जो राजनीति को रूपांतरिक कर अहिंसा, सत्य और आध्यात्मिक कीर्तिमानों से अनुप्राणित प्रयोग एवं परीक्षण की समानता को स्थापित कर मानववादी प्रयास है। इस प्रकार गाँधी की कार्यशैली को उग्रवादी आग्रहों से भी प्रेरित माना जाता है। हालांकि गाँधी उग्रवादी अग्रज 'बाल गंगाधर तिलक' का सम्मान करते थे, फिर भी वे अपनी कार्यशैली को उनसे संबंधित नहीं करते हैं, क्योंकि तिलक की मृत्यु के बाद भारतीय राजनीति उसी दिशा में प्रवाहित हो गई, जिस ओर तिलक करना चाहते थे। गाँधी की कार्यशैली में बाल गंगाधर तिलक के राजनीतिक व्यवहार की स्पष्ट छाप अंकित है।

यह स्पष्ट है कि गाँधी द्वारा असहयोग, स्वराज, बहिष्कार और अवज्ञा की नीति को अपनाया गया, किन्तु गाँधी आरम्भ से ही असहयोगी नहीं थे। पंजाब के जलियावाला बाग की घटना और रोलट एक्ट जैसी घटनाओं से उद्वेलित होकर गाँधी सहयोगी से असहयोगी बने और उन्होंने अपने द्वारा सहयोग की नीति को असहयोग, स्वशासन के स्थान पर स्वराज, संवैधानिक विरोध के साधनों के स्थान पर सत्याग्रह को अपनाया, क्योंकि इस समय तक ब्रिटिश औपनिवेशकों की दमनकारी नीति को गाँधी

भली–भाँति समझ गए थे। अतः उन्होंने परिवर्तित परिस्थितियों के अनुसार ब्रिटेन–भारत सम्पर्क को वरदान नहीं मानकर अभिशाप की उपमा दी और इसे मूलतः भारत विरोधी बताया। यहीं से राजनीतिक विश्लेषकों ने उनमें उग्रवादी विचारों की प्रतिछाया देखनी शुरू कर दी। यद्यपि गाँधी के योगदान का प्रारम्भ भारत में ही नहीं अपितु दक्षिण अफ्रीका के रंगभेद से विकृत हुए वातावरण में हुआ था। किन्तु फिर भी उनके राजनीतिक विचारों का निर्माण काल सन् 1894 से 1915 तक ही माना गया है।

इसी प्रकार गाँधी की दृष्टि धर्माधारित थी, जबकि उदारवादी और उग्रवादी दोनों ही धर्माधारित दृष्टि के समर्थक नहीं थे। गाँधी ने समाज सुधार को उसी प्रकार राजनीति से संयुक्त माना जैसे उदारवादियों ने, जबकि उग्रवादी पहले राजनीतिक सुधारों के आकांक्षी थे, जबकि गाँधी ने प्रतीकों को स्वरूपण किया। वे भिन्न थे। हरिजन, सत्य और अहिंसा, धर्म दरिद्र नारायण से गाँधी ने प्राथमिकता की स्थापना की। वे मानते थे कि व्यक्ति में देवत्व एवं नैतिकता के आधार पर संगठित एवं सशक्त समाज की स्थापना सम्भव है।

उदारवादी चिंतन में कानून का शासन, संवैधानिक संस्थात्मक और प्रतिक्रियात्मक स्थान, उत्तरदायी शासन प्रतिनिधि व्यवस्था एवं न्यास के निर्वचन ब्रिटेन मिन्स्टर मूल्यों से अनुप्राणित थे। जबकि गाँधी स्पष्टतया पश्चिमी सभ्यता, मशीनी संस्कृति और संसदीय व्यवस्था को दोषपूर्ण मानते थे। लेकिन उग्रवादियों का मत था कि कानून की मर्यादा के अन्दर स्वराज आंदोलन चलाया जा सकता है, किन्तु गांधी ने स्वीकार किया कि कानून यदि किसी व्यक्ति के अन्तःकरण के प्रतिकूल हो तो उसका विरोध का अधिकार सबको प्राप्त है। उनका सत्याग्रह का सम्पूर्ण सिद्धान्त ही इस मान्यता पर आधारित है कि मनुष्य को स्थापित कानून एवं शासन के मुकाबले में नैतिकता, अंतःकरण का समर्थन एवं पोषण करना चाहिए।

इस प्रकार उदारवादियों, उग्रवादियों एवं गाँधी ने प्रमुख उद्देश्य के स्तर पर साम्प्रदायिक सद्भावना तथाएकता को वरीयता दी। लेकिन ब्रिटिश शासन की नीतियों के कारण उदारवादी युग में ही मुस्लिम पृथकतावाद का प्रारम्भ हो गया था, क्योंकि वे सम्प्रदायवाद से उत्पन्न होने वाली विकृतियों से परिचित थे। अतः इसके निवारण को सभी के द्वारा स्वीकार किया गया।

इस प्रकार गाँधी की वैचारिक निरंतरता में भारतीय राजनीतिक चिन्तन का महत्वपूर्ण संदर्भ भी निहित है। अतः गांधी चिन्तन में कुछ सामयिक विचारधाराओं का समावेश स्वाभाविक था। लेकिन फिर भी मूल प्रयास तो गाँधी का ही कहना उचित होगा क्योंकि वे अपने चिन्तन और कर्मण्यता की समन्वयशील प्रवृत्ति से ही तात्कालिक भारतीय राजनीति को नव–दिशा–निर्माण में सहायता प्रदान कर सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. एम.ए.बुच : **राइज एण्ड ग्रोथ ऑफ इण्डियन लिबलिज्म**, गुड कमेपेनियन, बड़ौदा, 1938

2. हैराल्ड जे. लास्की : **द राइज ऑफ यूरोपियन लिबलिज्म एलन एण्ड अनविन**, लन्दन, 1960

3. डी.वी. माथुर : **गोखले ए पॉलिटिकल बायोग्राफी**, बम्बई, 1966

4. पी.ए. त्रिपाठी एवं बरुन डे : **फ्रीडम स्ट्रगल**, नेशलन बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 1972

5. एस.ए. वोलपार्ट : **तिलक एण्ड गोखले**, वर्कल युनिवर्सिटी, 1961

6. सुभाष कश्यप : **भारत का संवैधानिक विकास और स्वाधीनता संघर्ष**

7. मो.क. गाँधी : **मेरे सपनों का भारत**, अहमदाबाद, नवजीवन, 1960

8. डी.पी. अथाल्ये : **दि लाइफ ऑफ लोकमान्य तिलक**, पूरा, 1921

9. ज्यूडिथ एम ब्राउन : **गाँधीजी राइज टु पावर**, कैम्ब्रिज युनिविर्सिटी, 1971

10. टी.आर.देवगिरीकर : **गोपाल कृष्ण गोखले**, नई दिल्ली, 1969